(iii) दुःख निरोध (दुःखों का नाश भी सम्भव है) :— अविद्या ही दुःख का कारण है जो द्वादशाङ्ग प्रतीत्यसमुत्पाद-चक्र की प्रथम अवस्था है, इसी अविद्या के कारण प्रतीत्यसमुत्पाद-चक्र चलता रहता है। अतः अविद्या के नाश से उससे चलने वाला प्रतीत्यसमुत्पाद-चक्र भी नहीं चलता। यही दुःख निरोध है। अविद्या-निवृत्ति से अपरोक्षानुभूति द्वारा दुःख का आत्यन्तिक निरोध हो जाता है। यही दुःख निरोध है, यही निर्वाण है।

(iv) दुःख निरोध मार्ग (दुःखों के नाश का उपाय भी है) :— यह नैतिक और आध्यात्मिक साधना का मार्ग है जिसे 'आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग' की संज्ञा दी गई है। इस मार्ग के अन्तर्गत सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाक्, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीव, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति तथा सम्यक् समाधि आते हैं इन्हें ही अष्टाङ्गिक मार्ग कहा जाता है।

मध्यमा प्रतिपद् :— तृतीय आर्य सत्य में यह विश्वास हो जाता है कि दुःख निरोध सम्भव है तथापि यह शंका बनी ही रहती है कि इस दुःख निरोध का कोई मार्ग भी है या नहीं? चतुर्थ आर्य सत्य उपदेश में बुद्ध ने यह निश्चित कर दिया है कि संसार में दुःख का अन्त एक विशेष मार्ग का अनुसरण करके किया जा सकता है, इसी मार्ग को उन्होंने अष्टांङ्गिक मार्ग की संज्ञा दी।

बुद्ध की समकालीन दार्शनिक विचारधाराओं में मोक्ष प्राप्ति के लिए कठोर तपस्याओं का विशेष महत्त्व था। बुद्ध ने स्वयं छः वर्षों तक उत्कट साधना करके अन्त में उनकी निःसारता का अनुभव किया था। तत्पश्चात् उन्होंने कहा कि मोक्ष के लिए हृदयविदारक तपस्याएँ उतनी ही हानिकारक हैं जितनी विषयजन्य सुख की लालसा। अतः उन्होंने उपदेश दिया जो इस प्रपंच बंधन रूपी दुःख से मुक्ति चाहते हैं वे दोनों अन्तों का परिहार ~~करके मध्यम मार्ग को अपनायें।~~ अर्थात भोग विलास और शरीर को अत्यन्त क्षीण करने वाली कठोर तपस्या का परिहार के बीच का मार्ग अर्थात मध्यम मार्ग का अनुसरण ~~करें~~ करें। यही मध्यम मार्ग है, यही 'मध्यमा प्रतिपद्' है। प्रथम अन्त है आत्मा की नित्यता की धारणा से जन्य निकृष्ट वैषयिक सुखों की कामना और दूसरा अन्त है शरीर की उपयोगिता का पूर्ण निराकरण करते हुए कठोर साधना